'प्रकाश'-शक्ति की स्तुति

गुप्त नवरात्र में रात्रि-सूक्त का अनुष्ठान

पर्व-पत्र

- **आषाढ़शुक्ला प्रतिपदा-द्वितीया**, शनिवार (०२ जुलाई, ११) : **गुप्त नवरात्र प्रारम्भ**। शुभ **पुनर्वसु नक्षत्र** में प्रातः-काल **रजत-कुम्भ** की स्थापना करे। यदि **रजत-कुम्भ** न हो, तो **ताम्र-कुम्भ** की स्थापना करे। **श्वेत पुष्प** एवं **श्वेत वस्त्रों** से उसकी पूजा करे। **महा-सरस्वती** का आवाहन करे। **शीतल जल** और **शीतोपचार-कर्पूर, श्वेत चन्दन** से पूजन कर **धूप** से धूपित करे। **दीप** दिखाकर नाना प्रकार के **नैवेद्यों** को चढ़ाए। **'चण्डी'-पाठ** प्रारम्भ। सप्त-दिवसीय पाठ-कर्त्ता **'सप्तशती'** के **अध्याय १ का पाठ** करें। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** से सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे।
- **आषाढ़ शुक्ला द्वितीया-तृतीया**, रविवार (०३ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ**। सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय २-३ का पाठ** करें। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** से सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे। **रथ-यात्रा**।
- **आषाढ़ शुक्ला तृतीया-चतुर्थी**, सोमवार (०४ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ**। सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय ४ का पाठ** करें। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** से सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे। **वैनायकी श्रीगणेश-चतुर्थी**।
- **आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी-पञ्चमी**, मङ्गलवार (०५ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ**। सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय ५-६-७-८ का पाठ** करें। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** स सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे। **भौमवती चतुर्थी-पर्व**।
- **आषाढ़ शुक्ला पञ्चमी-षष्ठी**, बुधवार (०६ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ** । सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय ९-१०**। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** से सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे। **कुमार-षष्ठी**।
- **आषाढ़ शुक्ला सप्तमी**, गुरुवार (०७ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ**। सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय ११ का पाठ** करें। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** से सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे।
- **आषाढ़ शुक्ला अष्टमी**, शुक्रवार (०८ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ**। सप्त- दिवसीय पाठ में **अध्याय १२-१३ का पाठ** करें। अथवा **सारस्वत-वीज (ऐं)** से सम्पुटित **रात्रि-सूक्त** आदि का पाठ करे। **महा-निशा-पूजन**।
- **आषाढ़ शुक्ला नवमी**, शनिवार (०९ जुलाई, ११) : **'चण्डी'-पाठ**। **हवन**।
- **आषाढ़ शुक्ला एकादशी**, सोमवार (११ जुलाई, ११) : **श्री विष्णु-शयनी एकादशी**।
- **आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी-पूर्णिमा**, गुरुवार (१४ जुलाई, ११) : **कोकिल-रूपी शिव-शक्ति का पूजन**। रात्रि में निशा-पूजन।
- **आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा**, शुक्रवार (१५ जुलाई, ११) : **गुरु-पूर्णिमा-उत्सव**।

सूचना : **'चण्डी'** पुस्तक-माला वर्ष ७०, पुस्तक-४ (**श्री कमला-कल्पतरु, पुष्य-३**), पुस्तक ५ (**श्री श्री विद्या-साधना, पुष्य-६**), जुलाई, २०११ में भेजी जाएँगी।

'कौल-कल्पतरु' चण्डी की विशेष प्रस्तुति

वर्ष ७० (३)

रात्रि-सूक्त

विश्वेश्वरी-सूक्त

तान्त्रिक रात्रि-सूक्त

(सप्तशती-सूक्त-रहस्य)

व्याख्याकार

'कौल-कल्पतरु' श्री श्यामानन्दनाथ जी

आदि-सम्पादक

प्रातः-स्मरणीय 'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

★

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

Website : www.paravani.org Email : chandi_dham@rediffmail.com

अनुदान १५/-

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

समस्त आपत्तियों को दूर करनेवाली सभी ऐश्वर्यों को देनेवाली

सप्तशती की स्तुतियाँ (सूक्त)

सम्यक् हृदि स्थिता सेयं, जन्म-कर्मावलि-स्तुतिः।
एतां द्विज-मुखात् ज्ञात्वा, अधीयानो नरः सदा।।
विधूय निखिलां मायां, सम्यक् ज्ञानं समश्नुतम्।
सर्व-सम्पद् समाप्नोति, धुनोति सकलापदः।।

अर्थात् भगवती के आविर्भाव और उनके कर्मों से युक्त स्तव को
द्विज के मुख से जानकर,
अपने हृदय में **निष्ठा-पूर्वक धारण** कर,
जो मनुष्य इसका **सदा मनन** करता है,
वह **माया-जाल** को नष्ट कर
सद्-ज्ञान प्राप्त करता है और
समस्त आपत्तियों को दूर कर सभी ऐश्वर्यों को पाता है।

तृतीय संस्करण
शीतला अष्टमी (ज्येष्ठ कृष्णाष्टमी), क्रोधी सं० २०६८ वि०-२५ मई, २०११

परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

रात्रि-सूक्त

विनियोग—ॐ अस्य श्रीरात्रि-सूक्तस्य श्री ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीकाल-रात्रिः देवता, श्री चण्डिका-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्री ब्रह्मर्षये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीकाल-रात्रि-देवतायै नमः हृदि, श्री चण्डिका-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ध्यान—

एक-वेणी जपाकर्ण-पूरा नग्ना खर-स्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिका कर्णी, तैलाभ्यक्त-शरीरिणी।।१
वाम-पादोल्लसल्लोह-लता-कण्टक-भूषणा।
वर्धन्-मूर्ध-ध्वजा कृष्णा, काल-रात्रिः भयङ्करी।।२
व्याघ्र-चर्म-परीधाना, कण्ट-माला-विभूषिता।
वामे खड्गं च वज्रं च, दक्षिणे च वराभयौ।।३
विभ्रती दिव्य-रूपं च, रक्त-वस्त्रोत्तरीयका।
सप्तमी दुर्गमा प्रोक्ता, काल-रात्रि! नमोऽस्तु ते।।४

।। मूल-पाठ ।।

ॐ

।। ब्रह्मोवाच ।।

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं, स्थिति-संहार-कारिणीम्।
स्तौमि निद्रां भगवतीं, विष्णोरतुल - तेजसः।।१।।
त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि, वषट्-कार-स्वरात्मिका।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये!, त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता।।२।।
अर्ध - मात्रा - स्थिता नित्या, यानुच्चार्या विशेषतः।
त्वमेव सा त्वं सावित्री, त्वं देवि! जननी परा।।३।।
त्वयैतद् धार्यते विश्वं, त्वयैतत् सृज्यते जगत्।
त्ययैतत् पाल्यते देवि!, त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।।४।।

विसृष्टौ सृष्टि - रूपा त्वं, स्थिति - रूपा च पालने।
तथा संहृति - रूपान्ते, जगतोऽस्य जगन्मये।।५।।
महा - विद्या महा - माया, महा - मेधा महा - स्मृतिः।
महा - मोहा च भवती, महा - देवी महाऽऽसुरी।।६।।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य, गुण - त्रय - विभाविनी।
काल - रात्रिर्महा - रात्रिर्मोह - रात्रिश्च दारुणा।।७।।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध - लक्षणा।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च।।८।।
खड्गिनी शूलिनी घोरा, गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी वाण - भुशुण्डी - परिघायुधा।।९।।
सौम्या सौम्य - तराऽशेष - सौम्येभ्यस्त्वति - सुन्दरी।
पराऽपराणां परमा, त्वमेव परमेश्वरी।।१०।।
यच्च किञ्चित् क्वचिद् वस्तु, सदसद् वाऽखिलात्मिके!।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः, सा त्वं किं स्तूयसे तदा।।११।।
यया त्वया जगत् - स्त्रष्टा, जगत् - पाताऽत्ति यो जगत्।
सोऽपि निद्रा - वशं नीतः, कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः?।।१२।।
विष्णुः शरीर - ग्रहणमहमीशान एव च।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां, कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्?।।१३।।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि! संस्तुता।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु - कैटभौ।।१४।।
प्रबोधं च जगत् - स्वामी, नीयतामच्युतो लघु।
बोधश्च क्रियतामस्य, हन्तुमेतौ महाऽसुरौ।।१५।।

।।श्री मार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये
प्रथमोऽध्याये रात्रि-सूक्तः ॐ तत् सत्।।

***

रात्रि-सूक्त

'**श्रीदुर्गा सप्तशती**' के **प्रथम** अध्याय में **ब्रह्मा जी** ने '**काल-रात्रि**' **महा-शक्ति** की पन्द्रह श्लोकों में स्तुति की है। यह स्तुति '**रात्रि-सूक्त**' के नाम से प्रसिद्ध है। इसे '**विश्वेश्वरी-सूक्त**' और '**तान्त्रिक रात्रि-सूक्त**' भी कहते हैं। इसका रहस्य हृदयङ्गम करने से **शक्ति की साधना** में विशेष रूप से प्रगति होती है।

'**रात्रि-सूक्त**' की व्याख्या करने के पूर्व '**रात्रि**' का परिचय देना और इससे सम्बन्धित **प्रथम** चरित के कथानक का दार्शनिक भाव स्पष्ट करना आवश्यक है।

'**रात्रि-सूक्त**' का सर्वोत्कृष्ट रूप '**काल-रात्रि**'—**नव-दुर्गाओं** में से **सातवीं दुर्गा भगवती** हैं। इस सूक्त में इस **महा-शक्ति** की वन्दना कर '**तम आसीत् तमसाऽति-गूढम्**' **ब्रह्म** का प्रतिपादन किया गया है। **भगवती** रात्रि **१. समष्टि** और **२. व्यष्टि**—दो रूपोंवाली हैं। **समष्टि-रात्रि** को '**ब्रह्म-रात्रि**' और **व्यष्टि-रात्रि** को '**जीव-रात्रि**' कहते हैं।

'**रात्रि**'-शब्द के कई अर्थ हैं। देवन-शीला **ब्रह्म**-मायात्मिका **इच्छा-शक्ति** को **रात्रि** कहते हैं। यह **रात्रि**-रूपा **चिदचित् शक्ति**, समय आने पर अपनी **इच्छा-शक्ति** द्वारा **महदादि** अर्थात् **महत् तत्त्वों** का **पञ्चीकरण** कर, **अविद्या-प्रपञ्च** की **सृष्टि** करती है और जीवों को उनके कर्मों के अनुसार, इस विश्व-रङ्ग-मञ्च पर, जिसकी यवनिका '**समय**' है, '**विश्व-नाटक**' का '**पात्र**' बनाकर लीला कराती हुई, स्वयं देखती है और **आनन्द** का उपभोग करती है।

यहाँ '**माया**' से '**माया**'-वाद की '**माया**' से तात्पर्य नहीं है क्योंकि वह '**किम्भू किमाकार**' कही गई है अर्थात् वह न **सत्** है और न **असत्**। यहाँ '**माया**' से केवल '**विद्या—माया**' से तात्पर्य है। '**माया**' और '**अविद्या**' में पृथ्वी-आकाश का अन्तर है। '**माया**'—'**अविद्या**' का कारण है। इसकी आवश्यकता **अविद्या-प्रपञ्च** के निमित्त मात्र है। '**विद्या**', माया—चित्-परा आद्या-शक्ति का भेदाभेद रूप है अर्थात् वह उससे भिन्न नहीं है और एक भी नहीं है। '**माया**'—**महा-काल** अर्थात् **आद्या-शक्ति, निष्कल ब्रह्म** की '**काल**'-**शक्ति (काल एव शक्तिर्यस्याः सा)** से उत्पन्न हुई है। इसी का नाम **भुवनेशी** है (शक्ति-सङ्गम, काली-खण्ड १/९६)—

काली व्यापक-सच्छाया, महा-कालः प्रकीर्तितः।
महा-कालाद् भवेन्माया, सा प्रोक्ता भुवनेश्वरी।।

व्यष्टि-रात्रि अर्थात् जीवों की रात्रि, दिवा के अवसान, व्यवहार के लोप अथवा निष्क्रियता का सूचक है। **समष्टि-रात्रि** या **विश्व-रात्रि**—प्रपञ्चावसान में **महा-प्रलय-काल**-रूपा **काल-रात्रि** कहलाती है। इसी प्रकार खण्ड-प्रलय आदि में अन्य अमुख्य रात्रियाँ **महा-रात्रि, मोह-रात्रि** इत्यादि कहलाती हैं। '**देवी-पुराण**' कहता है—

ब्रह्म - मायात्मिका रात्रिः, परमेश-लयात्मिका ।
तदधिष्ठात्री देवी तु, भुवनेशी प्रकीर्तिता ।।

जिस प्रकार '**व्यष्टि-रात्रि**' जीव का विश्राम-काल है, उसी प्रकार इस रात्रि की विशिष्टावस्था अर्थात् '**समष्टि-रात्रि**' अथवा '**काल-रात्रि**'–चित्-परा **आद्या-शक्ति**-'**ब्रह्म**' के विश्राम का काल है। संक्षेप में इस '**रात्रि-शक्ति**' को हम–'**असद् वा इदमग्र आसीत्, ततो वै सदजायत**' (तैत्तिरीय ब्राह्मण)–इस श्रौत वाक्य के मनन से समझ सकते हैं। '**गीता**' के ८ वें अध्याय के १८ वें और १९ वें श्लोकों के मनन से भी '**रात्रि-तत्त्व**' का ज्ञान हो सकता है।

ब्रह्मा जी ने '**रात्रि-सूक्त**' द्वारा **श्रीदुर्गा चित्-परा-शक्ति** के प्रथम रूप **महा-काली** की स्तुति की है। प्रथम रूप **महा-काली** का चरित '**सप्तशती**' के प्रथम तीन अध्यायों में वर्णित किया गया है। **प्रथम चरित** का आध्यात्मिक रहस्य इस प्रकार है–

विष्णु अर्थात् **पर-ब्रह्म**–'**व्यपनात् विष्णुः**', यथा '**कर्षणात् कृष्णः, रमणात् रामः।**' यहाँ कथित इनके '**भगवान्**' और '**प्रभु**'–इन दो विशेषणों से **पर-ब्रह्म-शक्ति** अर्थात् सर्व-गुण-सम्पन्न **चिदचिद ब्रह्म** का बोध होता है। '**भगवान्**' से समग्र अवबोध से तात्पर्य है और '**प्रभु**' से अप्रतिहतेच्छ अर्थात् **सर्वैश्वर्य-शाली** या **सर्व-गुण-सम्पन्न** से तात्पर्य है। '**स्वामी**' से सबके स्वामी '**ब्रह्म**' **की शक्ति** से ही तात्पर्य है क्योंकि इसका स्वामी दूसरा कोई नहीं है।

ऐसे ही **विष्णु** ने **कल्प** के अन्त में, समस्त **व्यक्त प्रकृति** को अपने में समेट कर **(सर्व-भूतानि कौन्तेय!, प्रकृतिं यान्ति मामिकाम्।–'गीता')** अखण्डानन्द-तेजो-राशि-रूपी तरङ्गोंवाले, दिव्य मङ्गलालय, निरतिशय आनन्दामृत-सागर में अर्थात् त्रि-गुणातीत या त्रि-तत्त्वातीत अवस्था में, अनन्त शुद्ध-बोध-रूप **अनन्त (शेषनाग) की शय्या** (आधार) बनाकर, उस **कृत-प्रपञ्च** के विराम-स्थान में, '**योग**' द्वारा स्वेच्छा से निर्मित स्व-नेत्रावरण-रूप '**निद्रा**' को अङ्गीकार किया था अर्थात् वे **शुद्ध सत्-चित्-आनन्दावस्था** में '**विश्राम**' कर रहे थे। दूसरे शब्दों में, वे **निष्क्रिय** हो रहे थे। उनकी इच्छा हुई कि '**एकोऽहं बहु स्याम**' अर्थात् एक से अनेक होऊँ।

यही '**इच्छा-शक्ति**'–**ब्रह्मा** की उत्पत्ति की बोधक है। इसी प्रकार '**ज्ञान-शक्ति**' और '**क्रिया-शक्ति**' क्रमशः **विष्णु** और **रुद्र** की द्योतक हैं। ये तीनों शक्तियाँ, एक ही **परा धर्मी-शक्ति** की अभिन्न और विभिन्न **धर्म-शक्तियाँ** हैं। इसी हेतु **ब्रह्मा** अर्थात् '**इच्छा-शक्ति**' का अधिष्ठान–'**ब्रह्म-शक्ति**' एवं **विष्णु** हैं। इसी की द्योतक है–**विष्णु (ब्रह्म) के नाभि-कमल पर ब्रह्मा की भिन्नाभिन्न स्थिति**। अस्तु!

इसी समय, **आकाश** आदि **स्थूल-प्रपञ्च**-के वीज-द्वय–**१. नाम** और **२. रूप** की '**अविद्या**' (ब्रह्म का अविद्या-पाद) आविर्भूत हुई। ये ही पौराणिक द्वन्द्व-रूप **मधु** और **कैटभ** नाम से **विष्णु** के **कर्ण-मल-स्वरूप** कहे गए हैं। यही '**मल**', जो पाँच प्रकार का है, '**अविद्या**' है।

पाँचों मलों के नाम हैं—१. आणव्य, २. कार्मण, ३. मायिक, ४. प्राकृतिक और ५. आहङ्कारिक। ये पाँचों **पञ्च-तत्त्वाधिष्ठातृ देवताओं** अर्थात् **पाँचों तत्त्वों** में क्रमशः हैं, किन्तु '**शक्ति-सङ्गम तन्त्र**' का मत है कि '**आणव्य**'-मल '**जीव**'-मात्र में, '**कार्मण**'-मल—'**ब्रह्मा**' और '**विष्णु**' में, '**मायिक**'-मल—'**रुद्र**' में, '**प्राकृतिक**'-मल—'**ईश्वर**' में और '**आहङ्कारिक**'-मल—**सदा-शिव** में है।

'**अविद्या**' किसी को छोड़नेवाली नहीं। अतएव '**मधु**' और '**कैटभ**' अर्थात् **नाम** और **रूप-धारिणी अविद्या**—'**ब्रह्मा**' को भी मारने अर्थात् ग्रसने को दौड़ी। इस पर, '**ब्रह्मा**'—**अविद्या को दूर करनेवाली महा-विद्या** को पुकारने लगे।

यहाँ यह शङ्का हो सकती है कि '**धर्म-शक्ति**' के बदले '**धर्मी-शक्ति**' की ही स्तुति क्यों न की गई ? इसका समाधान यह है कि जो भी क्रिया होती है, वह '**धर्म-शक्ति**' के द्वारा ही होती है। '**सूर्य**' से **तम या अन्धकार** का नाश नहीं होता, वरन् उसकी '**धर्म-शक्ति**'—'**प्रकाश**' से ही होती है। '**अग्नि**' से चावल इत्यादि नहीं पकते, वरन् अग्नि की '**पकाने की शक्ति**' से ही सब कुछ पकता है। इसी प्रकार जितने भी कार्य होते हैं, '**धर्मी-शक्ति**' की '**धर्म-शक्ति**' द्वारा ही होते हैं।

'**धर्म-शक्तियों**' में '**विमर्श-शक्ति**' प्रधान है। इस स्तवन या चिन्तन से '**विमर्श-शक्ति**' (**बुद्धि-शक्ति**) द्वारा '**अविद्या**' का अर्थात् **नाम-रूप**-द्वय-रूपी **मधु** और **कैटभ** का नाश या रूपान्तर हुआ। '**व्यष्टि**' में भी ऐसा ही होता है। **अविवेक** के उदय होने पर '**बुद्धि-योग**' अर्थात् '**बुद्धि-शक्ति**' द्वारा ही उसे दूर किया जाता है। **भगवान् श्रीकृष्ण** का **अर्जुन** को यही उपदेश है (गीता)— **बुद्धि-युक्तो जहातीह, उभे सुकृत-दुष्कृते।**

किन्तु यहाँ '**सुकृत**' और '**दुष्कृत**' के बदले '**इच्छा-द्वेष-समुत्थेन द्वन्द्व-मोह**' से तात्पर्य है।

मधु और **कैटभ** के नाश या रूपान्तर से सृष्टि-सम्पादन-रूप '**मेद**' से **मेदिनी (पृथ्वी)** और दूसरे-दूसरे अङ्गों से सृष्टि की अन्य सभी क्रियाएँ सम्पादित होने का तात्पर्य है।

यही '**रात्रि-सूक्त**' की भूमिका—**प्रथम चरित का आध्यात्मिक रहस्य** है। इसके **मनन** से, **ब्रह्मा** के समान, हम जीवों के '**द्वन्द्व-मोह**' का नाश अर्थात् '**अनात्माकार**'-**वृत्ति का लय** होकर, '**आत्माकार-वृत्ति**' की स्थिति दृढ़ होती है। इसका एक दूसरा गुह्य-तर तात्पर्य '**कुण्डली-शक्ति**' के उत्थान से भी है।

संक्षेप में, '**रात्रि-सूक्त**'—'**रात्रि**'-रूपिणी '**प्रकाश-शक्ति**' की स्तुति है। '**स्तुति**' से '**प्रकाश-शक्ति**' प्रसन्न होती है। प्रसन्न होकर, वह सु-**बुद्धि** देकर, '**अविद्या**' को दूर करती है, अन्यथा '**सुबुद्धि**' की प्राप्ति नहीं होती। '**गीता**' (१०।१०) का भी यही उपदेश है—

तेषां सतत - युक्तानां, भजतां प्रीति - पूर्वकम्।
ददामि बुद्धि - योगं तं, येन मामुपयान्ति ते।।

***

'रात्रि'-सूक्त-व्याख्या

(ॐ) ब्रह्मोवाच।

टीका—ब्रह्मा ने कहा।

व्याख्या—ब्रह्मा ने चिदचित्-स्वरूपिणी **परा-शक्ति** की वन्दना की।

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं, स्थिति-संहार-कारिणीम्।
स्तौमि निद्रां भगवतीं, विष्णोरतुल - तेजसः।।१

टीका—(मैं) विश्व की स्वामिनी, जगत् की जननी, पालिका और लय-कारिका, अद्वितीय तेजस्वी **विष्णु** की **भगवती निद्रा** की वन्दना करता हूँ।

व्याख्या—'विश्वेश्वरी' से विश्व-व्यापिका **चित्-शक्ति** परा-सत्ता का बोध होता है।

'धात्री' से यहाँ **जननी** से तात्पर्य है न कि **पालनेवाली** से, जो **स्थिति-कारिणी** से बोध होता है। **'धातृ'**-शब्द, सृष्टि-कर्तृ वचन है। ऐसा मेदिनी **'कोष'** भी कहता है—**'धात्री जनन्यामलकी वसुमत्युपमातृष्विति'**। पुनः **'धाताब्जयो निर्द्रुहिण इति'**—'कोशान्तरे'।

'स्थिति-कारिणी' से तात्पर्य उस **'धर्म-शक्ति'** से है, जिससे पदार्थ की धारणा या स्थिति है। **'ध्रियते अनेन सः धर्मः'**।

'संहार' का अर्थ है—सम्यक् प्रकार से हरण अर्थात् निःशेष रूप का लय। इन तीनों विशेषणों से, **१. इच्छा, २. ज्ञान** और **३. क्रिया**—शक्ति-त्रय-समन्विता **भगवती** अर्थात् **षडैश्वर्य**-शालिनी का बोध होता है। **छः प्रकार के ऐश्वर्य** या सामर्थ्य—**१. समग्रता, २. धर्म, ३. यश, ४. श्रेय, ५. ज्ञान** और **६. विज्ञान** हैं—

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य, धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञान-विज्ञानयोश्चैव, षण्णां भग इतीरणा।।

यही **सप्त-धर्मी शक्ति** अर्थात् **अनुपहिता** चेतनता की **परा-धर्म-शक्ति** अर्थात् (अपर-रूपिणी) **उपहित** चेतनता की **परा** धर्म-शक्ति अर्थात् अपर-**रूपिणी उप-हित** चेतनता-रूपा है। इसी को **'तुरीय-ब्रह्म'** कहते हैं। **अनुपहित** चेतनता को **'तुरीयातीत ब्रह्म'** कहते हैं।

'अतुल' से तात्पर्य है **अद्वितीय** या **निर्द्वन्द्व** से अर्थात् कोई दूसरी शक्ति या सत्ता नहीं है, जो इसकी तुलना कर सके।

'ब्रह्म' के सोने का तात्पर्य **'महा-भारत'** के इस वचन से भी ज्ञात होता है—**'अव्यक्तके पुरे शेते, पुरुषस्तेन कथ्यते'**। इसी प्रकार **सांख्य**-मत से **'पुरुष'** ही **अव्यक्ता प्रकृति** या **विलक्षण प्रकृति** है। **निद्रा की अवस्था** का तात्पर्य, **'ब्रह्म'** में और **'ब्रह्म'**-भावापन्न जीवन्मुक्तात्माओं में आत्म-रति से है, जिसको **'समाधि'** भी कहते हैं—**'ख्यातोऽयं पुरुषः श्रेष्ठः, सर्वदात्म-रति-प्रियः'**।

'शिव-मानस-पूजा' में भी **'निद्रा'** का अर्थ **समाधि** दिया है—**'पूजा ते विषयोपभोग-रचना, निद्रा समाधि-स्थितिः'**।

'**स्तौमि**' अर्थात् **स्तवन** करता हूँ। यह '**स्तवन**' केवल **वचन (वाणी)** ही से सम्पादित नहीं होता। जन-साधारण ऐसा ही इसका तात्पर्य लेते हैं, परन्तु '**स्तवन**' का अन्तस्तात्पर्य यथार्थ रूप में, **१. परा, २. पश्यन्ती, ३. मध्यमा** और **४. वैखरी**—चारों प्रकार के शब्द-रूपों में, '**नाद**' द्वारा '**ब्रह्मैक्य - चिन्तन**' से है। '**श्रुति**', इसकी ऐसे ही अर्थ में परिभाषा देती है—'**परा-पश्यन्त्यादि-निखिल-शब्दानां नाद-द्वारा ब्रह्मण्युप-संहार-चिन्तनेन स्तोत्रम्।**'—**(भावनोपनिषद्)।**

इसी तात्पर्य से **मण्डल ब्राह्मणोपनिषत्** में '**स्तुति**' का लक्ष्यार्थ '**मौन**' कहा गया है—'**मौनं स्तुतिः**'। '**मौन**' की परिभाषा, **ब्रह्मैकता या अखण्डाकार चित्त**-वृत्ति की बोधिका है। '**कठोपनिषत्**' (१/३/१३) में कहा है—

यच्छेद् वाङ् - मनसी प्राज्ञस्तद् यच्छेत् ज्ञानं आत्मनि।
ज्ञानमात्मनि महति नियच्छेत् तद् यच्छेच्छान्त आत्मनि।।

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि, वषट्-कार-स्वरात्मिका।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये!, त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता।।२।।

टीका—तुम्हीं **स्वाहा** हो, **स्वधा** हो, **वषट्-कार** हो, तुम्हीं **स्वर**-रूपा हो। **हे नित्य रहनेवाली!** तुम अमृत हो। तुम (अक्षरों में) **तीनों प्रकारों की मात्राओं** में रहती हो।

व्याख्या—'**स्वाहा**' देव-हवि का '**दान-मन्त्र**' है। इसके बिना **देव-गण** हवि को नहीं पा सकते। यह तदभिमानिनी '**वह्नि-शक्ति**' है। '**स्वधा**' पितृ-हवि का '**दान-मन्त्र**' है, जिसके बिना '**सोमप**' और '**असोमप**' अर्थात् जो **सोम-पान** करते हैं और जो नहीं करते हैं, दोनों ही **पितृ-गण** हवि नहीं पा सकते। यह तदभिमानिनी '**पितृ-शक्ति**' है। '**वषट्-कार**' देवता-विशेष का '**हवि-दान-मन्त्र**' है। यथा-'**वषडिन्द्राय इति**'-मन्त्र-लिङ्ग से।

उक्त तीनों-'**स्वाहा, स्वधा**' और '**वषट्-कार**' से **भगवती** का **वाक्-काम-धेनु** होना सिद्ध है। **वाग् - रूपी** गाय के **१. स्वाहा - कार, २. वषट् - कार, ३. हन्त - कार** और **४. स्वधा - कार** - रूपी — चार स्तन हैं। इनमें प्रथम दो से अर्थात् **स्वाहा** और **वषट्-कार** से **देव-गण** की स्थिति है अर्थात् इन्हीं दोनों **वाक्-शक्तियों** से **देवता** लोग पालित होते हैं। '**हन्त-कार**' से मनुष्य और '**स्वधा - कार**' से '**पितृ-गण**' पालित होते हैं। '**वृहदारण्यक ब्राह्मण**' (श्रुति) कहता है—

'**वाचं धेनुमुपासीत। तस्याश्चत्वारः स्तनः—स्वाहा-कारो, वषट्-कारो, हन्त-कारः, स्वधा-कारः। तस्या द्वौ स्तनौ देवा उप-जीवन्ति—स्वाहा-कारं च वषट्-कारम्। हन्त-कारं मनुष्याः, स्वधा-कारं पितरः·······।**

इससे यह सिद्ध है कि **शब्द-ब्रह्म-रूपिणी भगवती** जिस प्रकार **विश्व की सृजन-कर्त्री** हैं, उसी प्रकार **पालन-कर्त्री** भी हैं। '**स्वर-रूपा**' का वाच्यार्थ है—**उदात्तादि स्वर-रूपा**, किन्तु

इसका अन्तस्तात्पर्य है **वर्णों (अक्षरों) की शक्ति** से। इसी से '**अ**' से '**अः**' तक के सोलहों स्वर '**शक्ति-अक्षर**' कहे गए हैं। इन स्वरों के न रहने से **अक्षर** या **वर्ण** पूर्ण नहीं होते। दूसरा तात्पर्य वेद के मन्त्रों के '**स्वर**' से है। **स्वर-हीन पाठ** को **अशुद्ध पाठ** कहा गया है, जिससे अनिष्टापत्ति की सम्भावना होती है। '**इन्द्र-शत्रोर्वर्द्धस्व**' में **स्वर के अशुद्ध उच्चारण** के फल-स्वरूप उल्टा फल हुआ, यह पौराणिक घटना सर्व-विदित है। इससे **भगवती** का **वाग्-रूपिणी शक्ति** की प्रधान '**स्वर-शक्ति**' होना सिद्ध होता है।

'**नित्या**' से **उभय परिणामिनी नित्या सत्ता** का ही बोध होता है। **नित्या सत्ता** तीन प्रकार की होती है—**१. अपरिणामिनी, २. सम-परिणामिनी** और **३. विषय-परिणामिनी।** प्रथम **चिन्मात्र-वृत्ति**, दूसरी **अचिन्मात्र-वृत्ति** और तीसरी **उभय** अर्थात् **चित्** और **अचित्** (सत् और असत्)। **भगवान् श्रीकृष्ण** ने भी **ब्रह्म** की एक परिभाषा इसी भाव की पुष्टि हेतु '**गीता**' ९/१९ में कही है—'**सदसच्चाहमर्जुन!**' यह **उपनिषदों** के '**सर्वं खल्विदं ब्रह्म**' सिद्धान्त का समर्थक है। दोनों वृत्तिवाली है। दूसरी को '**अनित्या**' भी कह सकते हैं क्योंकि **प्रलय**-दशा में इसके रूप का अभाव हो जाता है। यहाँ **नित्या** से **प्रकृति-पुरुष-धारणी एका सत्ता** से तात्पर्य है, जिसका नीर-क्षीर-वत् संयोग-सम्बन्ध है (नित्य-संयोग-वादियों के मतानुसार विभु-द्वय-संयोग-वत् ही यह सम्बन्ध है)।

'**सुधा**' का अर्थ है, शरीर का पोषण करनेवाली-'**सुष्टु दधाति पुष्णाति शरीरम् इति सुधा**'। यहाँ शरीर से **शरीर-त्रय** अर्थात् **१. स्थूल, २. सूक्ष्म** और **३. पर**—इन तीनों से तात्पर्य है।

'**अक्षरे**'-शब्द '**अक्षरा**'-शब्द का सम्बोधनान्त भी है, जिसका अर्थ **तीनों लोकों** की **भोक्त्री** है—'**अश्नाति त्रीन् लोकान् भुंक्ते, भूत-रूपत्वात् अक्षरा**'। दूसरा अर्थ है सर्व (**त्रि-लोक**) **व्यापिका शक्ति**—'**अश्नुते व्याप्नोति विश्वात्मत्वात् अक्षरा**', परन्तु यहाँ '**अक्षरं-न क्षरं विद्यादक्षरं**' तात्पर्य ही और सम्बोधनान्त के स्थान में सप्तमी-कारक ही उचित प्रतीत होता है। इस '**अक्षर**' से तर्क-दर्शन के प्रतिकूल शब्द की नित्यता सिद्ध होती है (तर्क-दर्शन भी '**वैखरी**'-शब्द मात्र को **अनित्य** कहते हैं। ऐसा ही तात्पर्य ठीक प्रतीत होता है क्योंकि **परा, पश्यन्ती** और **मध्यमा** शब्द-रूपों में तर्क का समावेश नहीं है—'**तर्काप्रतिष्ठानात्**'।)

अक्षर में '**त्रिधा मात्रात्मिका**' से दो तात्पर्य हैं—(१) प्रत्येक अक्षर की शक्ति **त्रिधा** है अर्थात् **१. ह्रस्व, २. दीर्घ** और **३. प्लुत-रूपिणी।** (२) '**प्रणव**' (ॐ) की त्रि-मात्रात्मिका **शक्ति**। जिस प्रकार कोई भी वर्ण **ह्रस्व, दीर्घ** और **प्लुत** मात्रा से रहित होने से शक्ति-हीन होता है, उसी प्रकार '**प्रणव**' भी मात्रा-हीन होने से अव्यवहार्य या निष्फल होता है। संक्षेप में '**त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता**' से '**शब्द**'-ब्रह्म की '**मातृका**'-शक्ति से तात्पर्य है।

अर्ध-मात्रा-स्थिता नित्या, यानुच्चार्या विशेषतः।
त्वमेव सा त्वं[1] सावित्री, त्वं देवि[2]! जननी परा।।३।।

टीका—हे देवि! विशेष प्रकार से उच्चारित की जानेवाली **आधी मात्रा** में तुम सर्वदा रहनेवाली वही **(शक्ति)** हो। तुम्हीं **परा-माता सावित्री** (रूपा) हो।

व्याख्या—पूर्व-पद्य में **भगवती** की **उभय-परिणामिनी 'नित्या सत्ता'** का रूप वर्णित है। इसमें अपरिणामिनी **'नित्या-सत्ता'** के रूप का उल्लेख है। पूर्व-कथित मात्रा-त्रय से—**१. जाग्रत्, २. स्वप्न** और **३. सुषुप्ति** या **१. विश्व, २. तैजस्** और **३. प्राज्ञ**—इन तीन अवस्थाओं से तात्पर्य है। इन तीनों मात्राओं के रूप, लोक इत्यादि का श्रुतियों में इस प्रकार उल्लेख है—प्रथम मात्रा **'अ'-कार** के रूप **पृथ्वी**-लोक, **ऋग्वेद, ब्रह्मा वसु, गायत्री** छन्द और **अग्नि** गार्हस्पत्य हैं। द्वितीय मात्रा **'उ'-कार** के रूप **अन्तरिक्ष**-लोक, **यजुर्वेद, विष्णु**-रुद्र आदि ऋषि, **त्रिष्टुप्** छन्द और अग्नि **दक्षिणाग्नि** हैं। तृतीय मात्रा **'अर्ध म-कार'** के रूप **स्वर्ग**-लोक, **साम**-वेद, **रुद्र**-गण, **आदित्य**-गण ऋषि, छन्द **जगती** और अग्नि **आहवनीय** हैं (देखिए—**'अथर्व-शिखोपनिषत्**)।

'अर्द्ध-मात्रा' से **तुरीयावस्था** का बोध होता है। यही **वेदान्त** के **'तत् त्वमसि'** आदि **'महा - वाक्यों'** की अर्थ - लक्षण - युक्ति की अभिमानिनी **तुरीया विद्या** है—**'अर्द्ध-मात्रा-समायुक्तः, प्रणवो मोक्ष-दायकः'** (ध्यान-बिन्दूपनिषत्)। यही **निस्त्रैगुण्या** अर्थात् त्रि-**गुणों** से परे **'परा-विद्या'** है। **'प्रणव'** की **त्रि-मात्राओं** से **त्रि-गुण-द्योतक** (उनके अधिष्ठातृ देवताओं)-**१. ब्रह्मा, २. विष्णु** और **३. रुद्र** से तात्पर्य है और इसकी **अर्ध-मात्रा** से **'परा-शक्ति'** से तात्पर्य है—**'परमा अर्द्ध-मात्रा या, वारुणी तां विदुर्बुधाः।'** (नाद-बिन्दूपनिषत्)।

१. **'सा त्वं'** के स्थान में दाक्षिणात्य पाठ **'सन्ध्या'** है। **'सन्ध्या'** का अर्थ है **दिन और रात्रि** को रखनेवाली—**'सन्धीयते दिवा-रात्रौ'**। दूसरा अर्थ है **सन्धि-समय** अर्थात् दिन और रात्रि के सन्धि-समय-द्वय—**१. प्रातः-सन्ध्या** और **२. सायं-सन्ध्या।** यह सन्ध्या **पितरों की जननी** है। इसकी कथा **'काली-पुराण'** में प्रसिद्ध है। इस भाव में **'सन्ध्या'** का तात्पर्य **स्थूल देह की 'रात्रि'** अर्थात् **'अन्त'** से और **सूक्ष्म देह** के **'प्रभात'** से अर्थात् **'प्रारम्भ'** से है अर्थात् जीव **स्थूल शरीर** को छोड़कर **सूक्ष्म शरीर** में, जिसका द्योतक **'पितृ-रूप'** है, जाता है।

२. **'देवि'** के स्थान में दाक्षिणात्य पाठ **'वेद'** है। **वेद-जननी** का तात्पर्य **वेदाध्ययन की जननी** या एक-मात्र **'कारण'** से है। **'कारण'**—वेद का अध्ययन **'गायत्री'** महा-मन्त्र से दीक्षित हुए बिना नहीं हो सकता अर्थात् अदीक्षित को वेदाध्ययन का अधिकार नहीं है। **'वेद-जननी'** शब्द **'सावित्री'** का विशेषण है।

तीनों मात्राओं अर्थात् **१. ह्रस्व, २. दीर्घ** और **३. प्लुत** के उच्चारण सामान्य हैं, परन्तु इस **अर्ध-मात्रा** का उच्चारण एक विशिष्ट प्रकार से होता है, जो शास्त्रादि-द्वारा नहीं जाना जा सकता, केवल **गुरु-मुख** से ही सम्यक् प्रकार जाना जाकर अपने अनुभव से उच्चारित हो सकता है। इसी से शास्त्रों में कहा गया—'**या विशेषत: अनुच्चार्य्यमिदमात्मा-रूपत्वात्**' क्योंकि '**यतो वाचो निवर्त्तन्ते, अप्राप्य मनसा सह।**' '**श्रुति**' की विशेष-लक्षणा **अर्द्ध-मात्रा** के उच्चारण का वर्णन करना असम्भव-सा है। '**श्रुति**' भी ऐसा ही कहती है—'**तदेतदुपासीत मुनयो वाग्-वदन्ति, न तस्य ग्रहणमयं पन्था:** (अथर्व-शीर्षोपनिषत्)।

ॐ-कार की **अर्द्ध-मात्रा** के उल्लेख के पश्चात् **ॐ-कार** से आविर्भूत **सावित्री** का उल्लेख है। ठीक भी है। '**श्रुति**' कहती है—'**ॐ-कारात् सावित्री, सावित्र्या गायत्री, गायत्र्या लोका भवन्ति**' **(अथर्व-शिर:)**। यह **सावित्री**—सविता देवता **सूर्य** की **व्याहृति**-त्रय-रहिता (ऋक्) '**शक्ति**' है। इसी में **व्याहृति-त्रय** अर्थात् **१. भू:, २. भुव:** और **३. स्व:** संयुक्त होने से '**गायत्री**' का शब्द-स्वरूप निर्मित है, जिससे तीनों लोक व्याप्त हैं—'**गायत्री वा इदं सर्वम्**' (श्रुति:)। इसका **ब्रह्म**-परत्व '**ब्रह्म-सूत्र**' के गायत्र्यधिकरणक सूत्रों से सिद्ध है। संक्षेप में, यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त है कि '**चतुष्पदा गायत्री**' ही छन्द के रूप में '**ब्रह्म**' के **१. अविद्या, २. विद्या, ३. आनन्द** और **४. तुरीय**—चारों '**पाद**' की द्योतक है और ये ही क्रमश: **चारों वेदों की जनयित्रियाँ** (सृजन करनेवाली) हैं।

'**गायत्री**' का **चतुर्थ पाद**—'**पदो रजसो सावदोम्**' ही **ब्रह्म** का **चतुर्थ तुरीय**-पाद है। यह केवल '**मोक्ष-पाद**' होने से गृहस्थों के निमित्त अनुपयुक्त है अर्थात् **कर्म-काण्ड** के परे होने से इसे हटा दिया गया है। इसी से हम लोगों को '**त्रिपदा-गायत्री**' की ही दीक्षा दी जाती है। इसी से '**परा**'-**माता** कही गई है क्योंकि **मूल-प्रकृति**-रूपा अर्थात् **अव्यक्ता प्रकृति** ही अपनी व्यक्तावस्था की जननी है, जो **महत्-तत्त्वों की जननी** या **सृष्टि** करनेवाली है।

सम्बोधनान्त '**देवि**' से '**दिव् क्रीडायाम्**' लीला-मयी से तात्पर्य है, परन्तु इस शब्द की दूसरी व्युत्पत्ति—'**देवयति सर्वान् प्रवृत्ति-निवृत्त्युपदेशेन व्यवहारयति इति देवी**' से '**विमर्श-शक्ति**' या '**बुद्धि**'-**शक्ति** से तात्पर्य है। यहाँ दोनों तात्पर्यों का बोध होता है।

त्वयैतद् धार्यते विश्वं, त्वयैतत् सृज्यते जगत्।
त्ययैतत् पाल्यते देवि!, त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।।४।।

टीका—हे देवि ! यह विश्व सर्वदा तुम्हारे ही द्वारा स्थित है; तुमसे ही यह जगत् उत्पन्न होता है; तुझसे ही यह पालित है और तुम्हीं इसका अन्त भी करती हो।

व्याख्या—यहाँ '**देवी**' से **क्रीड़ा-शीला** अर्थात् **लीला-मयी** और **व्यवहार-चतुरा** अर्थात् धर्म-कुशला अर्थों से तात्पर्य है। उत्पत्ति-क्रिया '**परा-शक्ति**' की **लीला**-द्योतक है और शेष

क्रियाएँ **'धर्म'**-रूपी **नियति** की द्योतक हैं अर्थात् वह अण्ट-सण्ट करनेवाली नहीं है, वरन् शृङ्खला-बद्ध ही उनकी सारी क्रियाएँ होती हैं।

'विश्व' और **'जगत्'**—दोनों एकार्थ-वाचक शब्दों का प्रयोग भी सार-गर्भित है, यद्यपि बाह्य रूप से दोनों शब्दों का एक ही साधारण अर्थ—**'संसार'** है, किन्तु दोनों के पृथक्-पृथक् लक्ष्यार्थ या सूक्ष्मार्थ हैं।

'विश्व'—नित्य है क्योंकि **'विश्व'** (**विश्—उणादि क्वन्**) का तात्पर्य **व्यापक सत्ता** से है। **'जगत्'** (**गम्—शतृ**)—**अनित्य** है। यह संसार के दृश्य गमन-शील भाव का द्योतक है। इसी हेतु **सृजन, पालन** और **संहार** क्रियाएँ इसी **'जगत्'** से सम्बद्ध हैं और **धारण** की व्यापक क्रिया **'विश्व'** से सम्बद्ध है। अतएव यहाँ पुनरुक्ति -दोष नहीं लग सकता अर्थात् **'धार्यते'** और **'पाल्यते'** दोनों का एक-वाचक अर्थ नहीं है।

'सर्वदा' के भी दो अर्थ हैं। प्रथम साधारण अर्थ है—**'सर्व-कालिक'** और दूसरा अर्थ है—**सर्वं ददाति इति सर्वदा** अर्थात् **'सर्व'** या **त्रिगुण** कृत्यों के फल को देनेवाली। **'सर्वदा आतोऽनुपसर्गे कः—टाप्।'**

विसृष्टौ सृष्टि - रूपा त्वं, स्थिति - रूपा च पालने।
तथा संहृति - रूपान्ते, जगतोऽस्य जगन्मये।।५।।

टीका—हे जगत्-स्वरूपे! इस जगत् की विशेष रूप की सृष्टि के समय तुम **'सृष्टि-रूपा'** हो और विनाश-काल में **'संहृति-रूपा'** अर्थात् **संहार-रूपिणी शक्ति** हो।

व्याख्या—'जगन्मये' जगत् की **'मया'** (जगतो मया) शब्द का सम्बोधनान्त रूप है, जिसका अर्थ **'मयते या मया'** होता है। **'मयते'** का अर्थ है— जाननेवाली (**मया पचाद्यचि स्त्रियां टाप्**)। इससे **'सर्वज्ञा'** से तात्पर्य है।

'सृष्टि' का तात्पर्य **सर्जन** से है। यह सृष्टि विशेष-रूप की है अर्थात् साधारण रीति की, जिस प्रकार हम देखते हैं, नहीं है अर्थात् **'क्रिया'-सृष्टि** नहीं है, वरन् **'इच्छा'-सृष्टि** है। इसी से **विशिष्टा सृष्टि** है। **'वि'** से विशिष्ट जिस प्रकार भाव है, उसी प्रकार **'वि'** से विकल्प भाव का भी बोध होता है, क्योंकि यह जगत् **चित् परा-शक्ति** का सङ्कल्प-विकल्प मात्र है। इसी से **'श्रुति'** कहती है—**'सङ्कल्प-विकल्पात्मकं जगत्'।**

सृष्टि-रूपा से तात्पर्य सृष्टि-स्वभावा से है—**'रूपं स्वभावे सौन्दर्यं'**—कोषान्तर। सृष्टि - स्वभावा का लक्ष्यार्थ है—**'सृष्टि'** की **'इच्छा' - भाववाली शक्ति** अर्थात् **इच्छा-शक्ति-धारिणी 'धर्मी' शक्ति**। यह लक्षण भी **'ब्रह्म'-परत्व** है, जिसका स्पष्टीकरण **'ब्रह्म-सूत्र'—'जन्माद्यस्य यतः'** से होता है।

'**स्थिति-रूपा**' से रक्षण-कर्त्री '**ज्ञान-शक्ति**' से तात्पर्य है–'**ब्रह्मणो लिङ्ग हि त्रैलोक्य-रक्षणम्**'। यह भी '**ब्रह्म-परत्व**' है।

'**संहृति-रूपा**' से '**क्रिया-शक्ति**' से तात्पर्य है। यह भी '**ब्रह्म-परत्व**' है। इसे हम '**ब्रह्म-सूत्र**'–'**अत्ता चराचर -ग्रहणात्** के मनन से समझ सकते हैं। '**अदा अन्नेन तायते पालयति या सा**' इस भाव में **पालन-शक्ति** का बोध होता है और '**अत्तृ**' का अर्थ जब '**भोक्तृ**' है, तब '**लयात्मिका शक्ति**' का बोध होता है। '**ग्रहण**' का ही अर्थ संहरण है।

महा-विद्या महा - माया, महा - मेधा महा - स्मृतिः।
महा - मोहा च भवती, महा - देवी महाऽऽसुरी।।६।।

टीका–आप **परा-विद्या, परा-माया, परा-सर्वज्ञत्व-शक्ति**, सृष्टि के अनुकूल अतीत कल्प-गत सभी पदार्थों की '**स्मृति**'-रूपा अर्थात् जगत् में बड़े-से-छोटे तक को ध्यान में रखनेवाली '**स्मृति-शक्ति**', संसार के मूल कारण **राग-रूप** '**मोह**'-स्वरूपा, **सकल देव-शक्ति-स्वरूपा (महती चासौ देवी)** अर्थात् **समस्त दैवी सम्पत्ति**-रूपा '**शक्ति**' और **सकल असुर-शक्ति-स्वरूपा** अर्थात् **समस्त आसुरी सम्पदा**-रूपा '**शक्ति**' हैं।

व्याख्या–इस पद्य का यह अर्थ है कि **भगवती विरुद्ध-वाक्यार्थ-शरीर-मण्डला** हैं। ये **महा-विद्या** भी हैं और '**महा-अविद्या**' भी; ये '**महा-मेधा**' भी हैं और '**महा-मोहा**' भी; ये **महा-देवी** भी हैं और '**महा-आसुरी**' भी। ये परस्पर-विरुद्ध वाक्य हैं। यही '**ब्रह्म**' की प्रधान परिभाषा है। श्रुतियाँ भी कहती हैं–'**विद्याऽहमविद्याऽहम्। वेदोऽहमवेदोऽहम्**' इत्यादि (**देव्युपनिषत्**)। '**गीता**' भी ऐसा ही कहती है, किन्तु इनके अन्तस्तात्पर्य एक ही हैं, जो पदार्थों के '**तत्त्व-शोधन**' से बोध होते हैं। (देखिए **वेदान्त-सार**)।

महा-विद्या से तात्पर्य '**तत्त्वमसि**' आदि **महा-वाक्य**-लक्षणा **वेदान्त**-प्रतिपादित **महा-विद्याओं** से है। अथवा **आगमोक्त ब्रह्म-परक दश-महा-विद्याओं** से भी तात्पर्य है। ये '**आत्माकार-वृत्तियों**' की द्योतक हैं।

महा-माया से तात्पर्य सब विषयों में **सच्चिदानन्द**-लक्षणा-रूपी '**आत्मा**' में '**अनात्मता-बुद्धि**' से है। अर्थात् '**अनात्म**'-देह-गेहादि में '**आत्म-बुद्धि**'-रूपा ही '**महा-माया**' है, जो '**प्रपञ्च**' का कारण है। इसको अन्यत्राकार विभासिनी अर्थात् '**विपरीत-भावना**' कहते हैं।

महा-स्मृति का तात्पर्य '**समष्टि-रूप**' की टीका में ही कहा गया है। '**व्यष्टि**' में इसी को संस्कार-जन्य '**यथार्थ ज्ञान**' कहते हैं, जो '**आत्मा**' में रहती है और जिससे '**ब्रह्मैक्य-भाव**' रहता है। इस '**महा-स्मृति**' से दूसरा तात्पर्य है–'**स्मृति**' (अष्टादश-स्मृति) के '**महा-वाक्यार्थों**' से। ये स्मार्त्त '**महा-वाक्य**'–'**तत्त्वमसि**' आदि **श्रौत** '**महा-वाक्यों**' के ही बोधक हैं। अथवा ऐसा भी

कह सकते हैं कि सुने हुए (श्रौत) '**महा-वाक्यों**' को ध्यान में रखना ही '**स्मृति**' है। इसी उत्कृष्ट **धारणा-शक्ति** को '**महा-स्मृति**' कहते हैं।

'**महा-देवी**' से यहाँ तात्पर्य है **दैवी सम्पत्तियों की** '**उत्कृष्ट शक्ति**' से। इन्हीं दैवी **सम्पदाओं** से '**जीव**' का **अविद्या**-रूपी बन्धन हटाया जाकर '**मोक्ष**' होता है। जैसा '**गीता**', १६।५ कहती है—'**दैवी-सम्पद् विमोक्षाय**'।

'**महाऽऽसुरी**' से यह तात्पर्य नहीं है कि भगवती '**बड़ी राक्षसी**' है, अपितु इससे यह तात्पर्य है कि **आसुरी सम्पदाओं** की **उत्कृष्ट शक्ति** भी ये ही हैं। ये ही '**निबन्ध**' का कारण हैं। '**निबन्ध**' (निःशेष-रूपेण बन्धः) का तात्पर्य है, '**जीव**' की '**आवृतावस्था**' से। यही '**अविद्या**'—प्रपञ्च का मूल कारण है। प्रश्न हो सकता है कि इसका तात्पर्य या उपयोगिता क्या है ? यह प्रपञ्च अथवा '**ब्रह्म**' के आनन्द-उपभोग के निमित्त अनिवार्य है। इसके बिना '**प्रपञ्च**' रह ही नहीं सकता। इसी हेतु '**ब्रह्म**' अपने को छिपाकर अर्थात् **महा-मोह**-रूपी '**विभ्रम-शक्ति**' से अपने को आवृत कर संसार को रङ्ग-मञ्च बना **एक से अनेक** होकर '**द्वन्द्व**' समास-रूप में '**दैवी**' और '**आसुरी**'—दोनों सर्गों की सहायता से '**लीला**' करता हुआ, '**आनन्द**' का उपभोग करता है। यथा—

आच्छाद्य विक्षिपति संस्फुरदात्म - रूपम्, जीवेश्वरत्व जगदाकृतिभिर्मृषैव।
अज्ञानमावरण - विभ्रम - शक्ति - योगादात्मत्व - मात्र विषयाश्रयतावलेन।।

प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य, गुण - त्रय - विभाविनी।
काल - रात्रिर्महा - रात्रिर्मोह - रात्रिश्च दारुणा।।७।।

टीका—तुम सभी के तीनों **सत्त्व, राजस्** और **तमो**-गुणों के लक्षणों की अनुवर्त्तन-शीला '**प्रकृति**' मूल कारण हो अर्थात् '**प्रकृति**' को तीनों गुणों में व्यक्त करनेवाली हो। पुनः, तुम '**काल-रात्रि**', '**महा-रात्रि**' और '**दारुण**' (रात्रि) रूपिणी हो।

व्याख्या—'**प्रकृति**' का साधारण अर्थ है, '**स्वभाव**'। '**स्वभाव**' सम्बद्ध '**गुण**' को कहते हैं। '**गुण**' दो प्रकार के होते हैं–एक सम्बद्ध गुण, जो '**गुणी**' का अपना वैयक्तिक '**स्वाभाविक**' गुण है। दूसरा '**संयोग**' गुण, जो दूसरे पदार्थ के संयोग से ही उत्पन्न होता है। अतएव '**प्रकृति**' से '**धर्म**'-**शक्ति** का ही तात्पर्य है। यह **चित्-परा-धर्मी-शक्ति** (अव्यक्ता प्रकृति) की अभिन्ना धर्म-शक्ति '**व्यक्ता प्रकृति**' है। इसी **धर्मी-शक्ति** को, कोई '**पुराण-पुरुष**' कहते हैं, तो कोई '**पर-शिव**'। तात्पर्य यह है कि इसकी अनेक संज्ञाएँ हैं। यथा—तार्किक '**कर्त्ता**', सांख्यवाले '**प्रकृति**', '**विलक्षण-रूप पुरुष**', मीमांसक (पूर्व-वेदान्ती) '**ईश्वर**', उत्तर-वेदान्ती '**ब्रह्म**', वैयाकरण '**शब्द-ब्रह्म**', शैव '**शिव**' इत्यादि अपने-अपने मनोनुकूल संज्ञाओं द्वारा '**उस**' एक को व्यक्त करते हैं।

यह '**गुण-त्रय-विभाविनी**' इस हेतु कही गई है कि यह अपने को तीनों गुण के रूपों में व्यक्त या प्रकाशित करती है। **प्रकृति**, जैसा पूर्व कह चुके हैं, दो प्रकार की है—एक '**अव्यक्ता**' और दूसरी '**व्यक्ता**'। '**गुण-त्रय-विभाविनी**' से दूसरे प्रकार की **प्रकृति**, अर्थात '**व्यक्ता**' **प्रकृति** से ही तात्पर्य है।

'**काल-रात्रि**' के एकाधिक तात्पर्य हैं। इसके सम्बन्ध में पूर्व में कुछ लिखा जा चुका है। तथापि इतना और उल्लेख करना युक्त है कि '**काल-रात्रि**' से '**काल-रात्रि**' की अधिष्ठातृ देवता या '**शक्ति**' का तात्पर्य है। यह '**रात्रि**' या '**काल**' की अवसानावस्था है। इसी हेतु इसको '**काल-रात्रि**' कहते हैं। तात्पर्य कि '**काल**' की परिच्छिन्न सीमित भाव से अनिर्वचनीया, अव्यवहार्या, अलक्षणा चित्–परा '**आद्या-शक्ति**' में लयावस्था को '**काल-रात्रि**' कहते हैं।

यही '**काली**' का '**कालस्य कलनात् काली**' द्योतक अर्थ है। इसके और भी तात्पर्य हैं, किन्तु मुख्य तात्पर्य ऐसा ही है। इसी को '**व्यष्टि-भाव**' में **कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी** और **अमावास्या की योग-रात्रि** को 'काल-रात्रि' कहते हैं। यह '**आद्या**' **(काली)** और **द्वितीया (तारा) महा-विद्या-द्वय की शुभ तिथि** है। देखिए, '**शक्ति-सङ्गम, काली-खण्ड**', त्रयोदश पटल।

'**महा-रात्रि**' (महत: ईश्वरस्य रात्रि:) का एक अर्थ है—'**ब्रह्मा**' की मुक्ति-उपलक्षिता रात्रि अर्थात् '**ब्रह्मा**' (ईश्वर-त्रय के एक ईश्वर) की लयावस्था। यह **आश्विन शुक्लाष्टमी तिथि** है, जो '**दुर्गा**' **की शुभ तिथि** है।

'**महा-रात्रि**' (अकर्त्तव्ये कर्त्तव्याग्रहो मोह: तस्य रात्रि:) का मुख्य तात्पर्य है '**मोह**' के नाश की अवस्था से अर्थात् '**मोह**' का नाश करनेवाली **प्रकाश** या **विज्ञान-शक्ति** ही '**मोह-रात्रि**' की अधिष्ठातृ '**शक्ति**' है। यह '**कृष्ण-जन्माष्टमी**' तिथि है, जो **आद्या (काली) की शुभ तिथि** है।

'**दारुणा**' रात्रि की व्याख्या '**हरिवंश पुराण**' में इस प्रकार है—

'दारुणा दारुणत्वं चास्या: दु:परिहरत्वेन भीषणा।
अस्यास्तनु: तमो द्वारा, निशा - दिवस - नाशिनी।।'

यह **काल-रात्रि** की पर्याय-वाचक संज्ञा है क्योंकि **निशा-दिवस-नाशिनी** का अर्थ है—'**काल**'-परिणाम-नाशिनी अर्थात् '**काल-काली**' की संयुक्त ऐक्यावस्था अर्थात् '**महा-प्रलय**'।

तृतीया माधवे शुद्धा, कुल-वारर्क्ष-संयुता। दारुणा कीर्त्तिता देवि!

अर्थात् **वैशाख शुक्ला तृतीया**—**कुल-वार** (**मङ्गल** या **शुक्र**) और **कुल-नक्षत्र**-संयुता होने से ही **दारुणा रात्रि** है। इनके अतिरिक्त अनेक रात्रियाँ हैं। देखिए '**शक्ति-सङ्गम, काली-खण्ड**'।

त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध-लक्षणा।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्ति: क्षान्तिरेव च।।८।।

टीका—तुम लक्ष्मी, ऐश्वर्य-शक्ति, सङ्कोच (लज्जा), अन्त:करण और अध्यवसाय-व्यापारा हो। पुन: तुम अकरणीय कार्य करने में पर-ज्ञान-शङ्का से दु:ख-रूपिणी

वृत्ति, उपचय-रूपा, दूसरे अर्थात् अनधिगतार्थ के अतिरिक्त में तुच्छ या **हेय बुद्धि-रूपा**, विषय-व्यावृत्ति लक्षण की उपशम-रूपा हो और अनुपकारता या **अपराध सहने की शक्ति** हो।

व्याख्या–'**लक्ष्मी**' (**श्रीयते सर्वैरिति श्री:–लक्ष्मी:**) शब्द के भी एकाधिक अर्थ हैं। '**श्रिञ् सेवायाम् क्लिव् दीर्घा**' के भाव में दूसरा ही अर्थ है। '**विश्व-मेदिनी**' में **लक्ष्मी** का अर्थ **त्रि-वर्ग-सम्पत्ति**-वाचक है–'**श्रीर्वेष-रचना शोभा, भारती सरल-द्रुमे। लक्ष्म्यां त्रि-वर्ग-सम्पत्तौ, वेषोपकरणे मतौ।**' किन्तु यहाँ **लक्ष्मी** (**लक्षयतीति लक्ष्मी:**) से '**विज्ञान-शक्ति**' का तात्पर्य है।

'**ऐश्वर्य**'-शालिनी को ही **ईश्वरी** कहते हैं। यह '**ऐश्वर्य-शक्ति**' अव्याहतेच्छा या **अव्यर्थ कामना** अर्थात् इच्छानुकूल ही कार्य करने की स्वतन्त्र क्षमता है।

'**लज्जा**' की पुनरुक्ति है अर्थात् '**ह्री:**' और '**लज्जा**'–दोनों एकार्थ-वाचक शब्दों का उल्लेख है, परन्तु इन दोनों में सूक्ष्म भेद है। '**ह्री:**'-वाचक लज्जा दूसरे प्रकार की है अर्थात् साधारण लज्जा से पृथक् है। '**ह्री:**' अकरणीय वैमुख्य अर्थात् अरुचि या घृणा-युक्त लज्जा है और '**लज्जा**' से एक विशेष प्रकार के सङ्कोच का तात्पर्य है, जैसा टीका में उल्लेख है।

'**बुद्धि**' का विशेषण '**बोध-लक्षणा**' है, ऐसा भी कह सकते हैं अर्थात् अध्यवसाय-रूपिणी बुद्धि (**बुद्ध्यते अनया**) से **अन्त:करण** का तात्पर्य है। यहाँ '**बोध-लक्षणा बुद्धि**' से **अव्यवसायात्मिका बुद्धि** का तात्पर्य है क्योंकि बोध-लक्षणा से **ब्रह्म-बोध** या **ज्ञान-लक्षणा** का तात्पर्य है।

'**पुष्टि**' का तात्पर्य **स्थिति-शक्ति** से है। वैसे तो '**पुष्टि**' से **अनात्माकार-वृत्तियों** की '**पुष्टि**' अर्थात् विपरीत भावनाओं की '**पुष्टि**' या वृद्धि का भी बोध हो सकता है, परन्तु यहाँ '**ब्रह्म**' की स्व-स्थिति की '**पुष्टि**' से ही तात्पर्य है। यही '**स्थिति**'-**शक्ति** व्यष्टि में **आत्माकार-वृत्ति** को दृढ़ करनेवाली '**ज्ञान-शक्ति**' या **विमर्श-शक्ति** है। इसको '**अन्तर्मुखी वृत्ति**' कह सकते हैं।

'**तुष्टि**' से परात्म-विषयक **निरञ्जनात्मक** वृत्ति से अर्थात् '**ब्रह्म**' में '**एकोऽहं बहु स्याम**' की **अनिच्छा**-वृत्ति का तात्पर्य है। यही '**तुष्टि**', व्यष्टि में **आत्म-रति** का द्योतक है। इससे **ब्रह्म-भावना** के अतिरिक्त अर्थात् **अनात्माकार-वृत्ति**-बोधक विषयों में **हेय बुद्धि** का तात्पर्य है।

'**तुष्टि**' का ही सहकारी गुण '**शान्ति**' है। समष्टि में **विषय-व्यापार-रहितावस्था** को **शान्ति** कहते हैं और व्यष्टि में **ग्यारहों इन्द्रियों के निग्रह** को '**शान्ति**' कहते हैं। (**प्रशान्त** के '**श्रुति**'-कथित लक्षण इस प्रकार हैं–'**अन्ध-वत् पश्य रूपाणि, शब्दं बधिरवच्छृणु। काष्ठ-वत् पश्य वै देहं, प्रशान्तस्येति लक्षणम्**'–(अमृत-नादोपनिषत्)।

'**क्षान्ति**' का तात्पर्य **व्यष्टि-भाव**-बोधक है। यही समष्टि में अर्थात् **ब्रह्म** में विरोधी गुणों यथा **सत्त्व**, **राजस** और **तामस** गुणों के समावेश से तात्पर्य है। यह **भगवती चित्-परा-शक्ति** के '**विरुद्ध-वाक्यार्थ-शरीर-मण्डला**' होने के सिद्धान्त का समर्थन करता है। बाह्य रूप में (**द्वैत-भाव** में) **पराम्बा** के अपनी सन्तानों या भक्तों के अपराधों की क्षमा करनेवाली होने का द्योतक है।

खड्गिनी शूलिनी घोरा, गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी वाण-भुशुण्डी-परिघायुधा।।९।।

टीका–(तुम) खड्ग, शूल, गदा और चक्र धारण करनेवाली (हाथों में रखनेवाली) भयङ्कर-रूपा हो; शङ्ख, धनुष, वाण, बन्दूक तथा भाला (अस्त्र और शस्त्र) धारण करनेवाली हो।

व्याख्या–'**खड्गिनी**' से भेद-वृत्ति का तात्पर्य है। '**खड़ि भेदने**'। **खड्गिनी** की व्युत्पत्ति है–'**खण्डति परं खण्ड्यते अनेन इति खड्गः**'। '**विश्व-मेदिनी कोश**' के अनुसार '**खड्गः**' का तात्पर्य बुद्धि-भेद या द्वैत-बुद्धि से है–'**खड्गो गण्डक-शृङ्गासि, बुद्धि-भेदे च गण्डके**'।

'**शूल**' से त्रि-**शूल** अर्थात् **त्रि-ताप** का तात्पर्य है। '**शूलिनी**' से **त्रि-शूल** या **त्रि-ताप-हारिणी** शक्ति का तात्पर्य है। यथा '**दुर्गा**' से '**दुर्ग**' अर्थात् **विपत्ति-नाशिनी**। '**काली**' से '**काल**' अर्थात् **काल-भय-नाशिनी** का तात्पर्य है।

'**गदा**' का अन्तस्तात्पर्य **आद्या-विद्या** से है। '**गदा**' की '**श्रौत**'-परिभाषा है–'**आद्या विद्या गदा वेद्या, सर्वदा मे कर-स्थिता**'–(गोपालोत्तर-तापिन्युपनिषत्)। अतएव '**गदिनी**' से यही बोध होता है कि **भगवती**–'**आदि-विद्या**' की रखनेवाली है अर्थात् '**आद्या**' (ब्रह्म) '**विद्या**' से ही व्यक्ता हैं।

'**चक्र**'–**मन** का द्योतक है। '**श्रुति**' कहती है–'**मनश्चक्रं निगद्यते**'। इससे यह बोध होता है कि **भगवती** ही **मन** की **व्यापार-शीला शक्ति** हैं–'**भ्रामयन् सर्व-भूतानि, यन्त्रारूढानि मायया**'। '**मन**' भी **ब्रह्म** के अतिरिक्त दूसरा पदार्थ नहीं है। ऐसा '**श्रुति**' कहती है–'**मनो हि आत्मा, मनो हि लोको, मनो हि ब्रह्म, मन उपास्येति**'–(छान्दोग्योपनिषत् ७।३।१)।

'**घोरा**' का तात्पर्य **भीषणा** है, जो '**ब्रह्म**' का एक विशिष्ट लक्षण है (देखिए '**नृसिंह-पूर्व-तापिनी**' द्वितीयोपनिषत्)। '**ब्रह्म**' का विराट् रूप '**घोर**' अर्थात् डरावना ही है। '**गीता**' भी ऐसा ही कहती है। (अध्याय ११, श्लोक ४९)।

'**शङ्ख**' का लक्ष्यार्थ **पञ्च-भूतात्मक** '**प्रपञ्च**' है। '**श्रुति**' कहती है–'**पञ्च-भूतात्मकं शङ्खं, करे रजसि संस्थितम्**'। अतएव '**शङ्खिनी**' से **भगवती** का '**प्रपञ्चेश्वरी**' होना बोध होता है। अथवा '**शङ्खिनी**' ('**शङ्खनति जनयति। खन् अवदारणे**) का दूसरा लक्ष्यार्थ है–'**प्रकृति**' की जननी (मूल कारण)।

'**चाप**' अर्थात् **धनुष** रखनेवाली '**चापिनी**' है। '**प्रशस्तश्चापोऽस्यास्तीति चापिनी**'। साधारण '**चाप**' या **धनुष** बाँस का होता है–'**चपस्य वंश-भेदस्य विकारश्चापः**', परन्तु यह विशिष्ट (प्रशस्त) '**चाप**' है। ये '**चाप**' और '**वाण**' तन्त्र-प्रतिपादित **श्रीत्रिपुर-सुन्दरी** '**ब्रह्म (महा) विद्या**' के समान अन्तस्तात्पर्य रखनेवाले हैं। इनकी दार्शनिक व्याख्या '**आनन्द-लहरी**' में विशद रूप से की गई है।

संक्षेप में इनका तात्पर्य क्रमश: '**मन** और **पञ्च-तन्मात्रा**' से है। '**शब्दादि तन्मात्राः पञ्च-पुष्प-वाणाः। मन इक्ष-धनुः**'–(भावनोपनिषत्)। व्यष्टि में इन दोनों '**धनुष**' और '**शरों**' का तात्पर्य '**आत्मा**' के परम (चरम) '**लक्ष्य**' को वेधित करने के '**अस्त्र**' अर्थात् '**ब्रह्म-ज्ञान**'-प्राप्ति करने के साधन से है। '**मन**' के **धनुष** पर **वेदान्त** '**महा-वाक्य**'-रूपी शरों से लक्ष्य-रूपी '**ब्रह्म**' को वेधित करने के साधन के द्योतक '**धनुष**' और '**वाण**' हैं। ऐसा '**श्रुति**' भी कहती है–'**धनुर्गृहीत्वौपनिषदं महास्त्रं शरं हि उपासानिशितं सन्दधीत। आयम्य तद् भाव-गतेन चेतसा लक्ष्यं तदेवाक्षरं सौम्य! विद्धि**'–(मुण्डक २।२।३)।

'**भुशुण्डी**' का वाच्यार्थ-लोह-नलिका अर्थात **लोहे के नालोंवाला आयुध** है। इसे आजकल '**बन्दूक**' या '**बन्दूख**' कहते हैं, परन्तु '**भुशुण्डी**' (**भुवः शुण्डे च दीर्घत्वात**) का लक्ष्यार्थ है–**पञ्च-तन्मात्राओं** के क्रिया-स्वरूप भावों के मार्ग अर्थात् **विषय-विकाशिनी** '**चित्त-वृत्तियाँ**'। संक्षेप में इसका तात्पर्य है **व्यवसायात्मिका सर्वतोमुखी** '**बुद्धि**'। इसी हेतु इसे '**चतुर्भुज**' भी कहते हैं–'**गोलकौ यष्टिर्वा भुशुण्डीति चतुर्भुजः**' (इसे **शतघ्नी** भी कहते हैं।)

'**परिघ**' (**परितो हन्यते अनेन इति परिघः। परिघोऽस्त्रे योग-भेदे परिघातेऽर्गलेऽपि च इति हैमः।**) और '**शूल**' में नाम-मात्र का भेद है। साधारणतया '**शूल**'–**भाले या वर्छे** को कहते हैं। '**शूल**' का अन्तस्तात्पर्य है–**अन्तः-शूल** या **ताप** को दूर करनेवाला आयुध अर्थात् '**साधन**'। '**शूल**' से **अविद्या** की '**विक्षेप-शक्ति**' का तात्पर्य है। अतएव यह '**आयुध**' उस **विशेष यथार्थ** '**ज्ञान**' का द्योतक है, जिससे '**जीव**' के **भौतिक**, **दैविक** और **आत्मिक**–'**तीनों शूल**' या ताप दूर होते हैं।

'**परिघ**' अर्थात् **बाह्य-शूल** का तात्पर्य उस यथार्थ विशेष '**ज्ञान**' से है, जिससे '**अविद्या की आवरण-शक्ति**' हटती है। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि '**अविद्या**' की दो ही शक्तियाँ हैं–१. '**विक्षेप**' और २. '**आवरण**'। '**अस्याज्ञानस्य (अविद्यायाः) आवरण-विक्षेप-नामकमस्ति शक्ति-द्वयम्**'–(वेदान्त-सार)।

इस प्रकार '**भगवती**' या **ब्रह्म** के उग्र या '**घोर**'-रूप का वर्णन है। इसके पश्चात् '**सौम्य**'-रूप का वर्णन आता है–

सौम्या सौम्य-तराऽशेष-सौम्येभ्यस्त्वति-सुन्दरी।
पराऽपराणां परमा, त्वमेव परमेश्वरी।।१०।।

टीका–तुम्हीं **सुन्दरी**, सुन्दरी से भी सुन्दरी और सभी सुन्दरियों से **अति उत्कृष्टा सुन्दरी** हो। तुम्हीं बड़ी, बड़ी-से-भी-बड़ी और उससे भी बड़ी **ऐश्वर्य-शालिनी** हो (अर्थात् तुमसे बड़ी सत्तावाली और कोई नहीं है)।

व्याख्या–'**सौम्या**' का एक अर्थ **प्रशान्ता** या **प्रसन्न-मुखी** है। '**सोम**'–**चन्द्रमा** को कहते हैं क्योंकि **चन्द्र** अमृत उत्पन्न करनेवाला है–'**अमृतं सूते इति सोमः**'। '**चन्द्र**'–मनोज या सुन्दर है। सुन्दरता इसका लक्षण है। अतएव '**सौम्य**' (**सोमोद्भवः सौम्यः**) का लक्ष्यार्थ '**सुन्दर**' है।

'**सुन्दरी**' का तात्पर्य **सुष्टु** अर्थात् '**आनन्द**' देनेवाली है–'**सुष्टु नन्दयति इति सुन्दरी।**' सुन्दर आनन्द '**अमृत्व**' ही है। संक्षेप में पद्य के प्रथम चरण का तात्पर्य यह है कि **भगवती** '**ज्ञान**' की, जिससे '**सत्य आनन्द**' होता है, **प्रथम भूमिका** से लेकर **सप्तम चरम तुरीया भूमिका**–रूपिणी है। दूसरा तात्पर्य यह भी है कि **सुन्दरी**–'**विद्या**' अर्थात् '**हादि-कुल**' की विद्याओं में प्रथम से लेकर '**महा-त्रिपुर-सुन्दरी**'–**महा-ब्रह्म-विद्या** तक यही '**भगवती**' भिन्नाभिन्न रूपों में व्यक्ता है।

'**कालिका-पुराण**' भी कहता है–'**जगत्-त्रयेऽपि यस्यास्तु, सदृशी काऽपि सुन्दरी। नान्यास्ति ललिता तेन, देवी ललित-कान्तिका**'।

'**सुष्ट**' का दूसरा तात्पर्य भी है (**सुष्ट अतीव उनत्ति। उन्दी क्लेदने सु-पूर्वः बाहुलकादरः शकन्ध्वादित्वात् पर-रूपम्**)–'**गौरी**' इत्यादि से।

द्वितीय चरण के अनेक तात्पर्य हैं। '**पराणां परमा परा, त्वमेव परमेश्वरी**'–ऐसा अन्वय करने से '**पराणाम्**' अर्थात् **ब्रह्मादि महा-देवताओं** से भी बड़ी। **श्रुति**-वाक्य भी है '**यं कामये तं तमुग्र कृणोमि, तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम्**' अर्थात् '**जिसे चाहूँ, ऋषि और सु-बुद्धिमान् की क्या कथा, ब्रह्मा भी बना दूँ**' इस भाव में **ब्रह्मादि ईश्वरों** से भी बड़ी '**चरम सत्ता**' का तात्पर्य है और **परा पराणां परमा**, ऐसा अन्वय करने से '**पर**' और '**अपर**'–दोनों प्रकार के देवताओं से बड़ी है, ऐसा तात्पर्य है।

'**पर**' से **ब्रह्मादि त्रि-देवों** का और '**अपर**' से **इन्द्रादि दश दिक्पालों** का तात्पर्य है। इससे इस शङ्का का समाधान होता है कि इन्द्रादि के पालक **त्रि-देव** हैं या वही '**परा**' महा-**शक्ति**। इसका '**देवी-सूक्त**' (वैदिक) के '**अहं मित्रा-वरुणावुभौ बिभर्मि। अहमिन्द्राग्नी**…' वाक्य से भी स्पष्टीकरण होता है। संक्षेप में इसका यह तात्पर्य है कि '**तेरे सिवा दूसरी कोई सत्ता नहीं है।**'

तीसरा तात्पर्य यह भी बोध होता है कि '**वाक्-शक्ति**' (शब्द-ब्रह्म) की **पश्यन्ती, मध्यमा** और **वैखरी**-रूपिणी '**अपरा**' और '**परा**' वाक्-शक्तियों से भी **परमा** अर्थात् बड़ी शक्ति भगवती अनिर्वचनीया '**अनाख्या-शक्ति**' है।

यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि बड़ी के उल्लेख से '**निर्द्वन्द्वत्व**' में भेद नहीं आता अर्थात् दूसरी किसी भी '**सत्ता**' का बोध नहीं होता। '**परमा**' से '**मूल सत्ता**' का ही बोध होता है, जो अपने को अपर छोटी-छोटी सत्ताओं में व्यक्त करती है। इस भाव का स्पष्टीकरण इसके अव्यवहित अगले पद्य से होता है–

यच्च किञ्चित् क्वचिद् वस्तु, सदसद् वाऽखिलात्मिके!।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः, सा त्वं किं स्तूयसे तदा।।११।।

टीका—**हे विश्व-रूपिणी!** जो कुछ भी नित्य और अनित्य पदार्थ हैं, उन सबकी तुम **शक्ति-रूपा** हो। तुम्हारी स्तुति किस प्रकार हो सकती है ?

व्याख्या—इस पद्य में भगवती के '**सर्व-मयत्व**'-गुण का वर्णन हुआ है। '**अखिल**' का अर्थ है सम्पूर्ण अर्थात् निःशेष। इसकी '**आत्मिका**' से तात्पर्य है स्वरूपा का अर्थात् **भगवती**—**अव्यक्त** और **व्यक्त**, **नित्य** और **अनित्य**, **चित्** और **अचित्**—दोनों है या '**परस्पर-विरुद्धार्थ-रूपा**' है। यही '**ब्रह्म**' की '**सर्व-व्यापकता**' का लक्षण है। इसी को '**उभय-परिणामिनी सत्ता**' कहते हैं, जिससे **ब्रह्म** या **चित्-परा-शक्ति** का '**निर्द्वन्द्वत्व**' सिद्ध होता है। **भगवती** स्वयं अपनी लक्षणा का उल्लेख '**सप्तशती**' के १०वें अध्याय में इन शब्दों में करती हैं—'**एकैवाऽहं जगत्यत्र, द्वितीया का ममापरा?**' इसी को '**श्रुति**' इन वाक्यों में कहती है—'**ब्रह्म-व्यतिरिक्तं किञ्चिन्नास्ति। व्यतिरिक्तं यत्किञ्चित् प्रतीयते, तत् सर्वं बाधितमिति निश्चितम्।**'

'**असत्**' (अचित्) भी '**ब्रह्मांश**' ही है। यह '**ब्रह्म**' का '**अविद्या-पाद**' है। **प्रकृति** की यह व्यक्तावस्था है, ऐसा भी कह सकते हैं। '**व्यक्त**' की ही स्तुति हो सकती है। अदृष्ट, अव्यवहार्य, अलक्षण, '**अव्यक्त**' इत्यादि की स्तुति नहीं हो सकती।

यया त्वया जगत्-स्रष्टा, जगत्-पाताऽत्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रा-वशं नीतः, कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः?।।१२।।

टीका—जो संसार का **सृजन**, **पालन** और **संहार** करनेवाला है, वही जब तुम्हारे द्वारा निद्रा में वशीभूत है, तो कौन **ईश्वर** भी तुम्हारी स्तुति कर सकता है?

व्याख्या—'स्रष्टा', 'पाता' और '**अत्ता**' से १. इच्छा, २. ज्ञान और ३. क्रिया-'**शक्ति-त्रय**' का बोध होता है। यद्यपि '**अत्ता**' के दोनों अर्थ हैं—पालन-कर्ता (**अदा अन्नेन तायते पालयति**) भी और संहार-कर्त्ता (**अत्तृ इति भोक्तृ**) भी। तथापि यहाँ संहार-कर्त्ता से ही तात्पर्य है। '**ईश्वर**' से **ब्रह्मा** (स्तुति-कार), **विष्णु**, **रुद्र**, **सूर्य** और **गणेश**—पाँचों ईश्वरों से तात्पर्य है।

व्यापक '**शक्ति**' (सत्ता) **ब्रह्म** में असंख्य '**ब्रह्माण्ड**' हैं। **ब्रह्माण्ड** को **गोलक** भी कहते हैं। प्रत्येक **ब्रह्माण्ड** के एक-एक **ब्रह्मा**, एक-एक **विष्णु** और एक-एक **रुद्र** और **इन्द्रादि दश दिक्-पाल** रहते हैं। जब एक **ब्रह्माण्ड का लय** होता है, तब इन **पाँचों ईश्वरों** का भी लय हो जाता है। इसी से शास्त्रों में '**ब्रह्मादयः प्रति-दिने प्रलयाभिभूताः**' या '**विरञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति, हरिराप्नोति विरतिं, विनाशं कीनाशी भजति, धनदो याति निधनम्**' इत्यादि भाव-समर्थक वाक्य मिलते हैं। '**श्रीमद्-देवी-भागवत**' में इसी भाव के पौराणिक कथानक दिए हुए हैं।

'**निद्रा**' से तात्पर्य है **अव्यवसायात्मिका** '**बुद्धि**' से। यह **समष्टि** या '**ब्रह्म**' की **तुरीयावस्था** की द्योतक है और **व्यष्टि** या '**जीव**' की '**सुषुप्तावस्था**' या **असम्प्रज्ञातावस्था** की। वश करनेवाली न उपाधि है और न दूसरी कोई स्वतन्त्र शक्ति। यह **ब्रह्म** का स्वाभाविक सङ्कोच-गुण है, जैसे कि **ब्रह्म** का स्वाभाविक गुण है विकाश। अतएव **शक्ति-ब्रह्म** के क्रीड़ा-साधन (खिलौना) सदृश **ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रादि ईश्वरों** द्वारा इस **परमा, अमिता, अचिन्त्या शक्ति** की स्तुति क्या हो अर्थात् होनी असम्भव है।

इससे '**चित्-परा-शक्ति**' का '**अनिर्वचनीया**' होना सिद्ध होता है।

विष्णुः शरीर - ग्रहणमहमीशान एव च।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां, कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्?॥१३॥

टीका–तुमने **विष्णु**, **रुद्र** को और मुझे (**ब्रह्मा**) जन्म दिया है। अतएव (हममें) कौन तुम्हारी स्तुति करने में समर्थ है? (अर्थात् कोई भी नहीं)।

व्याख्या–यह पद्य पूर्वोक्त पद्य का समर्थक है। **पालन**, **संहरण** और **सृजन**–इन तीनों व्यापार-रूपी कार्यों का मूल कारण '**चित् परा-शक्ति**' है। कार्य को कारण का पूर्ण ज्ञान नहीं हो सकता। अतएव कारण के स्तवन या चिन्तन में कार्य की असमर्थता स्वयं-सिद्ध या स्वाभाविक है।

अब अगले दो पद्यों में **ब्रह्मा की प्रार्थना** है, जो स्वभावतः **चिन्तन** या **स्तवन** के पश्चात् होती है–

सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि! संस्तुता।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु - कैटभौ॥१४॥

टीका–**हे देवि!** अपने असाधारण विशेष सामर्थ्यों के वर्णन-द्वारा प्रार्थित तुम दुःसाध्य बल-शाली **मधु** और **कैटभ**–इन दोनों असुरों को मोह में डाल दो।

व्याख्या–'**देवी**' से यहाँ तात्पर्य है **निवृत्ति करनेवाली** '**महा-शक्ति**' से। इसका **विजिगिषा-शीला** के भाव में यहाँ प्रयोग हुआ है। '**दुर्वृत्त-वृत्त-शमनं तव देवि! शीलम्**' का तात्पर्य यहीं स्पष्ट बोध होता है। **दुर्वृत्तियों का नाश करनेवाली गुणवती भगवती** से **ब्रह्मा** ने प्रार्थना की है। इसी को **ब्रह्मा** ने पूर्व पद्य में **महा-विद्या** कहा है।

'**दुराधर्ष**' का अर्थ है–जय में दुःसाध्य। दोनों **असुर** अर्थात् **द्वन्द्व-मोह** को जीतना (मोह पर जय पाना) अति कठिन है। अतएव **मधु** और **कैटभ**-रूपी **मोह-द्वन्द्व** को '**दुराधर्ष**' (धर्षण वा जये दुःसाध्य) कहा गया है। '**मोहय**' का तात्पर्य है **अविवेक में लाने से**। **विवेक** है–सजातीय प्रवाह-वाही और **अविवेक** है–विजातीय प्रवाह-वाही। अतएव '**मोह में डाल दो**' से तात्पर्य यह है कि दोनों की आक्रमण की अनुकूल क्रिया को बदल दो।

जिस प्रकार **अहङ्कार** का नाश **पर-अहङ्कार** से, जो वाञ्छनीय है, **राग** का **पर-राग** से, लय का **प्रलय** से ही होता है, उसी प्रकार '**मोह**' का नाश '**पर-मोह**' से होता है।

'**अहङ्कार**' मुख्यत: दो प्रकार का होता है—**१ पर-अहङ्कार**, जो वाञ्छनीय है। उसके होने से, **२ अपर-अहङ्कार** अर्थात् **अविद्या** का नाश होता है। देखिए '**महोपनिषत्**' ९०, ९१, ९२।

'**राग**' भी दो प्रकार का होता है—देखिए '**मुक्तिकोपनिषत्**' ६१। '**पर-राग**' या '**अनुराग**' ही **भक्ति** होती है।

'**लय**' भी दो प्रकार का होता है। '**अपर-लय**' जड़ता है। देखिए '**वेदान्त-सार**' की '**सुबोधिनी टीका**'।

'**नाश**' का तात्पर्य है '**अभाव**' से। यथा '**अहं इदम् वा शरीरस्थ जीव:**' के अभाव में '**अहं स: वा ब्रह्म**' का भाव आता है, जिससे '**अहं जीव:**' भाव का नाश होता है। तर्क (न्याय) द्वारा घट के अभाव से भी घट का बोध होता है। दूसरे विष से विष का नाश होता है—'**विषस्य विषमौषधम्**'—ऐसा भी कह सकते हैं।

प्रबोधं च जगत् - स्वामी, नीयतामच्युतो लघु।
बोधश्च क्रियतामस्य, हन्तुमेतौ महाऽसुरौ।।१५।।

टीका—**संसार के स्वामी** को, जो अपने पद से न्यून नहीं होते, जल्दी जगा दो। (इन्हें) **दोनों बडे असुरों को मारने की बुद्धि** दो।

व्याख्या—'**जगत् - स्वामी**' से तात्पर्य है अभिन्न ऐश्वर्य - शाली, निर्द्वन्द्व सत्तावाला ('**स्वामी—स्वाभिन्नैश्वर्य इति स्व-शब्दान्मत्वर्थीय आमि नच्**')। '**अच्युत**' का तात्पर्य नित्य अनपचया शक्तिवाले से है अर्थात् जिसकी **शक्ति (धर्म-शक्ति)** कभी घटती नहीं। '**लघु**' का साधारण अर्थ हलका है, किन्तु यहाँ शीघ्रता है '**लघु क्षिप्र-तर द्रुतम् इति अभिधानात्**'। '**महाऽसुरौ**' का तात्पर्य है **दो बड़े असुरों** अर्थात् आसुरी-सम्पत्तिवालों से। **असुर** तो बहुत हैं अर्थात् **आसुरी सम्पदाएँ** अनेक हैं, किन्तु इनमें '**मोह-द्वन्द्व**' ही बड़े हैं। अतएव इनका विशेषण '**महा**' है।

'**बोध**' से **ज्ञान** या **पदार्थ-ज्ञान** अर्थात् '**बुद्धि**' का तात्पर्य है। '**बुद्धि-युक्तो जहातीह**'—गीतोक्त वचन से यही चरितार्थ होता है। यहाँ '**बुद्धि**' से व्यवसायात्मिका '**बुद्धि**' से ही तात्पर्य है क्योंकि जब तक कर्त्तव्यता रहती है, तभी तक '**बुद्धि**' व्यवसायात्मिका या '**क्रिया-शीला**' होती है। **क्रिया-शीला** '**बुद्धि**' या **व्यक्ता** '**बुद्धि**'—'**प्रकृति**' के '**आठ अङ्गों**' में से एक '**प्रधान अङ्ग**' (भाग) है। यही पद लयावस्था में **अव्यवसायात्मिका** होकर रहती है। इसी भाव को **तन्त्रोक्त त्रिपुटी** अथवा '**ज्ञातृ-ज्ञान-ज्ञेय**' की '**लयावस्था**' कहते हैं। यह '**अनाख्याऽवस्था**' कहलाती है।

***

रात्रि-सूक्त के प्रयोग

- 'श्रीदुर्गा सप्तशती' में श्री जगदम्बा के प्रति **चार स्तुतियाँ** हैं। इन चारों स्तुतियों के **'पाठ'** करने से सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। पहली स्तुति, ब्रह्मा जी के द्वारा की गई स्तुति–**'रात्रि-सूक्त'** है, जो पहले अध्याय में वर्णित है। दूसरी स्तुति–**'शक्रादि-स्तुति'** है, जो चौथे अध्याय में वर्णित है। तीसरी स्तुति–**'देवी-सूक्त'** है, जो पाँचवें अध्याय में है और चौथी स्तुति **'नारायणी स्तुति'** है, जो ग्यारहवें अध्याय में है। इन स्तुतियों के सम्बन्ध में भगवती ने **'सप्तशती'** में स्वयं कहा है–

इन स्तुतियों से जो नित मेरी, विनय करेगा चित देकर।
काटूँगी उसकी मैं सारी, बाधाएँ निश्चय डट कर।।

- यहाँ प्रस्तुत पहली स्तुति **'रात्रि-सूक्त'** विशेष रूप से **आत्म-शक्ति** (कुण्डलिनी शक्ति) का जागरण करनेवाली है। **'मन्त्रों'** को जागृत करने के लिए **'अभीष्ट मन्त्र'** को **'रात्रि-सूक्त'** के **पन्द्रह मन्त्रों से सम्पुटित** कर जपा जाता है। इस प्रकार **सम्पुटित जप** से **'मन्त्र'** शीघ्र जाग्रत होता है।
- **'रात्रि-सूक्त'**–निद्रा-विहीन **महा-रोगों को शान्त करनेवाली स्तुति** है। **'रात्रि-सूक्त'** का विधि-वत् नियमित **'पाठ'** कर कठिन-से-कठिन रोगों का शमन किया जा सकता है।
- **'रात्रि-सूक्त'**–सभी प्रकार के **विघ्नों को शान्त करनेवाली स्तुति** है। इसके नियमित श्रद्धा-पूर्वक **'पाठ'** से भयङ्कर-से-भयङ्कर विघ्न नष्ट हो जाते हैं।
- **'रात्रि-सूक्त'**–सभी प्रकार के **दुर्जनों का वशीकरण करनेवाला स्तोत्र** है। इसके **'पाठ'** द्वारा दुष्ट-से-दुष्ट दुर्जनों का भी वशीकरण किया जा सकता है।

***

‘श्रीदुर्गा-सप्तशती’-विषयक महत्त्व-पूर्ण पुस्तक

‘**सप्तशती**’ का ‘**पाठ**’ करना हम सभी के लिए कितना श्रेयस्कर है, यह हम सबको भलीभाँति ज्ञात है। इसके ‘**पाठ**’-मात्र से लोगों की सभी कामनाएँ पूरी हो जाती हैं। कठिनाई केवल यह है कि ‘**सप्तशती**’ नामक स्तव प्रसिद्ध ‘**मार्कण्डेय-पुराण**’ का अंश है, जो हजारों वर्ष प्राचीन है। इसके विभिन्न शब्दों एवं विशिष्ट सन्दर्भों का ठीक-ठीक अर्थ हमें ज्ञात नहीं होता और हम इसका भाव-पूर्ण ‘**पाठ**’ नहीं कर पाते, जिसका परिणाम यह होता है कि हमें जितनी सफलता मिलनी चाहिए, वह नहीं मिल पाती।

प्रस्तुत **सार्थ चण्डी (श्रीदुर्गा सप्तशती)** द्वारा उक्त कठिनाई दूर हो जाती है, क्योंकि इसमें अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण ‘**सप्तशती**’**-स्तव** के विभिन्न शब्दों एवं विशिष्ट सन्दर्भों पर सरल हिन्दी भाषा में प्रामाणिक रूप से प्रकाश डाला गया है। इसके अध्ययन द्वारा हम लोग प्रसिद्ध ‘**सप्तशती**’**-स्तव** का **भाव-पूर्ण** ‘**पाठ**’ कर सकते हैं, इसमें सन्देह नहीं। **सार्थ चण्डी (श्रीदुर्गा सप्तशती)** की यही सबसे बड़ी विशेषता है।

श्री जगदम्बा के अनुग्रह से
पूज्य पं० देवीदत्त जी शुक्ल की स्मृति में
उक्त महत्त्व-पूर्ण पुस्तक
‘कुल-भूषण पं० रमादत्त जी शुक्ल के
विशिष्ट सम्पादन में प्रकाशित हुई है।
सभी ‘श्रीदुर्गा-सप्तशती’-प्रेमी बन्धुओं के
लिए यह पुस्तक संग्रहणीय है।
अनुदान २५०.०० रु०

प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

ब्रह्मा जी द्वारा प्रकाश-शक्ति की स्तुति

'रात्रि'-सूक्त

'द्वन्द्व-मोह' का नाश करनेवाली स्तुति

'अनात्माकार'-वृत्ति का लय करनेवाली स्तुति

'आत्माकार'-वृत्ति को दृढ़ करनेवाली स्तुति

'कुण्डलिनी'-शक्ति का उत्थान करनेवाली स्तुति

'सु-बुद्धि' को देनेवाली स्तुति

'आत्म-शक्ति' को जगानेवाली स्तुति

'मन्त्र' को चैतन्य करनेवाली स्तुति

'ब्रह्म-ग्रन्थि' का भेदन करनेवाली स्तुति

प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

ककारादि
श्रीकाली-सहस्र-नाम

प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६